लिहाफ़ इस्मत चुग़ताई

जब मैं जाड़ों में लिहाफ़ ओढ़ती हूँ, तो पास की दीवारों पर उसकी परछाईं हाथी की तरह झूमती हुई मालूम होती है और एक दम से मेरा दिमाग़ बीती हुई दुनिया के पर्दों में दौड़ने भागने लगता है। न जाने क्या कुछ याद आने लगता है।
माफ़ कीजिएगा, मैं आप को ख़ुद अपने लिहाफ़ का रोमान अंगेज़ ज़िक्र बताने नहीं जा रही हूँ। न लिहाफ़ से किसी क़िस्म का रोमान जोड़ा ही जा सकता है। मेरे ख़याल में कम्बल आराम देह सही, मगर उसकी परछाईं इतनी भयानक नहीं होती जब लिहाफ़ की परछाईं दीवार पर डगमगा रही हो। ये तब का ज़िक्र है जब मैं छोटी सी थी और दिन भर भाइयों और उनके दोस्तों के साथ मार कटाई में गुज़ार दिया करती थी। कभी कभी मुझे ख़याल आता कि मैं कमबख़्त इतनी लड़ाका क्यूँ हूँ। इस उम्र में जब कि मेरी और बहनें आशिक़ जमा कर रही थीं मैं अपने पराए हर लड़के और लड़की से जो तुम बेज़ार में मशग़ूल थी। यही वजह थी कि अम्माँ जब आगरा जाने लगीं, तो हफ़्ते भर के लिए मुझे अपनी मुँह बोली बहन के पास छोड़ गईं। उनके यहाँ अम्माँ ख़ूब जानती थी कि चूहे का बच्चा भी नहीं और मैं किसी से लड़ भिड़ न सकूँगी। सज़ा तो ख़ूब थी! हाँ तो अम्माँ मुझे बेगम जान के पास छोड़ गईं। वही बेगम जान जिनका लिहाफ़ अब तक मेरे ज़हन में गर्म लोहे के दाग़ की तरह महफ़ूज़ है। ये बेगम जान थीं जिनके ग़रीब माँ बाप ने नवाब साहब को इसी लिए दामाद बना लिया कि वो पक्की उम्र के थे। मगर थे निहायत नेक। कोई रंडी बाज़ारी औरत उनके यहाँ नज़र नहीं आई। ख़ुद हाजी थे और बहुतों को हज करा चुके थे। मगर उन्हें एक अजीब-व-ग़रीब शौक़ था। लोगों को कबूतर पालने का शौक़ होता है, बटेरे लड़ाते हैं, मुर्ग़बाज़ी करते हैं। इस क़िस्म के वाहियात खेलों से नवाब साहब को नफ़रत थी। उनके यहाँ तो बस तालिब-ए-इल्म रहते थे। नौजवान गोरे गोरे पतली कमरों के लड़के जिनका ख़र्च वो ख़ुद बर्दाश्त करते थे।
मगर बेगम जान से शादी कर के तो वो उन्हें कुल साज़-व-सामान के साथ ही घर में

रख कर भूल गए और वो बेचारी दुबली पतली नाज़ुक सी बेगम तन्हाई के ग़म में घुलने लगी।
न जाने उनकी ज़िंदगी कहाँ से शुरू होती है। वहाँ से जब वो पैदा होने की ग़लती कर चुकी थी, या वहाँ से जब वो एक नवाब बेगम बन कर आईं और छप्पर खट पर ज़िंदगी गुज़ारने लगीं। या जब से नवाब साहब के यहाँ लड़कों का ज़ोर बंधा। उनके लिए मुर्ग़न हलवे और लज़ीज़ खाने जाने लगे और बेगम जान दीवान-ख़ाने के दर्ज़ों में से उन लचकती कमरों वाले लड़कों की चुस्त पिंडुलियाँ और मुअत्तर बारीक शबनम के कुरते देख देख कर अंगारों पर लोटने लगीं।
या जब से, जब वो मिन्नतों मुरादों से हार गईं, चले बंधे और टोटके और रातों की वज़ीफ़ा ख़्वानी भी चित्त हो गई। कहीं पत्थर में जोंक लगती है। नवाब साहब अपनी जगह से टस से मस न हुए। फिर बेगम जान का दिल टूट गया और वो इल्म की तरफ़ मुतवज्जा हुईं लेकिन यहाँ भी उन्हें कुछ न मिला। इश्क़िया नाविल और जज़्बाती अशआर पढ़ कर और भी पस्ती छा गई। रात की नींद भी हाथ से गई और बेगम जान जी जान छोड़कर बिल्कुल ही यास-व-हसरत की पोट बन गईं। चूल्हे में डाला ऐसा कपड़ा लत्ता। कपड़ा पहना जाता है, किसी पर रोब गांठने के लिए। अब न तो नवाब साहब को फ़ुर्सत कि शबनमी करतूतों को छोड़कर ज़रा इधर तवज्जा करें और न वो उन्हें आने जाने देते। जब से बेगम जान ब्याह कर आई थीं रिश्तेदार आकर महीनों रहते और चले जाते। मगर वो बेचारी क़ैद की क़ैद रहतीं।
फुर्तीले छोटे छोटे हाथ, कसी हुई छोटी सी तोंद। बड़े बड़े फूले हुए होंट, जो हमेशा नमी में डूबे रहते और जिस्म में अजीब घबराने वाली बू के शरारे निकलते रहते थे और ये नथुने थे फूले हुए, हाथ किस क़दर फुर्तीले थे, अभी कमर पर, तो वो लीजिए फिसल कर गए कूल्हों पर, वहां रपटे रानों पर और फिर दौड़ टखनों की तरफ़। मैं तो जब भी बेगम जान के पास बैठती यही देखती कि अब उसके हाथ कहाँ हैं और क्या कर रहे हैं। गर्मी जाड़े बेगम जान हैदराबादी जाली कारगे के कुरते पहनतीं। गहरे रंग के पाजामे और सफ़ैद झाग से कुरते और पंखा भी चलता हो। फिर वो हल्की दलाई ज़रूर जिस्म

पर ढके रहती थीं। उन्हें जाड़ा बहुत पसंद था। जाड़े में मुझे उनके यहाँ अच्छा मालूम होता। वो हिलती जुलती बहुत कम थीं। क़ालीन पर लेटी हैं। पीठ ख़िज रही है। ख़ुश्क मेवे चबा रही हैं और बस। रब्बो से दूसरी सारी नौकरानियाँ ख़ार खाती थीं। चुड़ैल बेगम जान के साथ खाती, साथ उठती बैठती और माशाअल्लाह साथ ही सोती थी। रब्बो और बेगम जान आम जिलवों और मजमूओं की दिलचस्प गुफ़्तगू का मौज़ू थीं। जहाँ उन दोनों का ज़िक्र आया और क़हक़हे उठे। ये लोग न जाने क्या क्या चटके ग़रीब पर उड़ाते। मगर वो दुनिया में किसी से मिलती न थीं। वहाँ तो बस वो थीं और उनकी खुजली।

मैंने कहा कि उस वक़्त मैं काफ़ी छोटी थी और बेगम जान पर फ़िदा। वो मुझे बहुत ही प्यार करती थीं। इत्तिफ़ाक़ से अम्मां आगरे गईं। उन्हें मालूम था कि अकेले घर में भाइयों से मार कटाई होगी। मारी मारी फिरूँगी। इस लिए वो हफ़्ते भर के लिए बेगम जान के पास छोड़ गईं। मैं भी ख़ुश और बेगम जान भी ख़ुश। आख़िर को अम्माँ की भाभी बनी हुई थीं।

सवाल ये उठा कि मैं सोऊं कहाँ? क़ुदरती तौर पर बेगम जान के कमरे में। लिहाज़ा मेरे लिए भी उनके छप्पर खट से लगा कर छोटी सी पलंगड़ी डाल दी गई। ग्यारह बजे तक तो बातें करते रहे, मैं और बेगम जान ताश खेलते रहे और फिर मैं सोने के लिए अपने पलंग पर चली गई और जब में सोई तो रब्बो वैसी ही बैठी उनकी पीठ खुजा रही थी।

"भंगन कहीं की।" मैंने सोचा। रात को मेरी एक दम से आँख खुली तो मुझे अजीब तरह का डर लगने लगा। कमरे में घुप्प अंधेरा और उस अंधेरे में बेगम जान का लिहाफ़ ऐसे हिल रहा था जैसे उसमें हाथी बंद हो। बेगम जान मैंने डरी हुई आवाज़ निकाली, हाथ हिलना बंद हो गया। लिहाफ़ नीचे दब गया।

"क्या है, सो रहो" बेगम जान ने कहीं से आवाज़ दी।

"डर लग रहा है।" मैंने चूहे की सी आवाज़ से कहा।

"सो जाओ। डर की क्या बात है। आयतल-कुर्सी पढ़ लो।"

"अच्छा मैंने जल्दी जल्दी आयतल-कुर्सी पढ़ी मगर यअलमो-मा-बैयना पर

दफ़्फ़अतन आ कर अटक गई। हालाँकि मुझे उस वक़्त पूरी याद थी।
"तुम्हारे पास आ जाऊँ बेगम जान।"
"नहीं बीटी सो रहो" ज़रा सख़्ती से कहा।
और फिर दो आदमियों के खुसर फुसर करने की आवाज़ सुनाई देने लगी। हाय रे दूसरा कौन मैं और भी डरी।
"बेगम जान चोर तो नहीं।"
"सो जाओ बेटा कैसा चोर" रब्बो की आवाज़ आई। मैं जल्दी से लिहाफ़ में मुँह डाल कर सो गई।
सुब्ह मेरे ज़हन में रात के ख़ौफ़नाक नज़ारे का ख़याल भी न रहा। मैं हमेशा की वहमी हूँ। रात को डरना। उठ उठ कर भागना और बड़बड़ाना तो बचपन में रोज़ ही होता था। सब तो कहते थे कि मुझ पर भूतों का साया हो गया है। लिहाज़ा मुझे ख़याल भी न रहा। सुब्ह को लिहाफ़ बिल्कुल मासूम नज़र आ रहा था मगर दूसरी रात मेरी आँख खुली तो रब्बो और बेगम जान में कुछ झगड़ा बड़ी ख़ामोशी से छप्पड़ खट पर ही तय हो रहा था और मुझे ख़ाक समझ न आया। और क्या फ़ैसला हुआ, रब्बो हिचकियाँ लेकर रोई फिर बिल्ली की तरह चिड़ चिड़ रुकाबी चाटने जैसी आवाज़ें आने लगीं। ओंह मैं घबरा कर सो गई।।
इन रिश्तेदारों को देख कर और भी उनका ख़ून जलता था कि सब के सब मज़े से माल उड़ाने, उम्दा घी निगलने, जाड़ों का साज़-व-सामान बनवाने आन मरते और बावजूद नई रुई के लिहाफ़ के बड़ी सर्दी में अकड़ा करतीं। हर करवट पर लिहाफ़ नई नई सूरतों बना कर दीवार पर साया डालता। मगर कोई भी साया ऐसा न था जो उन्हें ज़िंदा रखने के लिए काफ़ी हो। मगर क्यूँ जिए फिर कोई, ज़िंदगी! जान की ज़िंदगी जो थी, जीना बदा था नसीबों में, वो फिर जीने लगीं और ख़ूब जिऐ!
रब्बो ने उन्हें नीचे गिरते गिरते सँभाल लिया। चुप पट देखते देखते उनका सूखा जिस्म हरा होना शुरू हुआ। गाल चमक उठे और हुस्न फूट निकला। एक अजीब-व-ग़रीब तेल की मालिश से बेगम जान में ज़िंदगी की झलक आई। माफ़ कीजिए, इस

तेल का नुस्ख़ा आप को बेहतरीन से बेहतरीन रिसाले में भी न मिलेगा।
जब मैंने बेगम जान को देखा तो वो चालीस बयालिस की होंगी। उफ़्ह किस शान से वो मसनद पर नीम दराज़ थीं और रब्बो उनकी पीठ से लगी कमर दबा रही थी। एक ऊदे रंग का दोशाला उनके पैरो पर पड़ा था और वो महारानिंयों की तरह शानदार मालूम हो रही थीं। मुझे उनकी शक्ल बे-इंतिहा पसंद थी। मेरा जी चाहता था कि घंटों बिल्कुल पास से उनकी सूरत देखा करूँ। उनकी रंगत बिल्कुल सफ़ैद थी। नाम को सुर्ख़ी का ज़िक्र नहीं और बाल सियाह और तेल में डूबे रहते थे। मैंने आज तक उनकी मांग ही बिगड़ी न देखी। मजाल है जो एक बाल इधर उधर हो जाए। उनकी आँखें काली थीं और ऐब्रो पर के ज़ाएद बाल अलैहदा कर देने से कमानें से खिची रहती थीं। आँखें ज़रा तनी हुई रहती थीं। भारी भारी फूले पपोटे मोटी मोटी आँखें। सब से जो उनके चेहरे पर हैरत अंगेज़ जाज़बियत नज़र चीज़ थी, वो उनके होंट थे। उमूमन वो सुर्ख़ी से रंगे रहते थे। ऊपर के होंटों पर हल्की हल्की मूंछें सी थीं और कनपटियों पर लंबे लंबे बाल कभी कभी उनका चेहरा देखते देखते अजीब सा लगने लगता था। कम उम्र लड़कों जैसा! उनके जिस्म की जिल्द भी सफ़ैद और चिकनी थी। मालूम होता था, किसी ने कस कर टाँके लगा दिए हों। उमूमन वो अपनी पिंडुलियाँ खुजाने के लिए खोलतीं, तो मैं चुपके चुपके उनकी चमक देखा करती। उनका क़द बहुत लंबा था और फिर गोश्त होने की वजह से वो बहुत ही लंबी चौड़ी मालूम होती थीं लेकिन बहुत मुतनासिब और ढीला हुआ जिस्म था। बड़े बड़े चिकने और सफ़ैद हाथ और सुडौल कमर, तो रब्बो उनकी पीठ खुजाया करती थी। यानी घंटों उनकी पीठ खुजाती। पीठ खुजवाना भी ज़िंदगी की ज़रूरियात में से था बल्कि शायद ज़रूरत-ए-ज़िंदगी से भी ज़्यादा।
रब्बो को घर का और कोई काम न था बस वो सारे वक़्त उनके छप्पर खट पर चढ़ी कभी पैर, कभी सर और कभी जिस्म के दूसरे हिस्से को दबाया करती थी। कभी तो मेरा दिल होल उठता था जब देखो रब्बो कुछ न कुछ दबा रही है, या मालिश कर रही है। कोई दूसरा होता तो न जाने क्या होता। मैं अपना कहती हूँ, कोई इतना छुए भी तो मेरा जिस्म सड़ गल के ख़त्म हो जाए।

और फिर ये रोज़ रोज़ की मालिश काफ़ी नहीं थी। जिस रोज़ बेगम जान नहातीं। या अल्लाह बस दो घंटा पहले से तेल और ख़ुशबूदार उबटनों की मालिश शुरू हो जाती और इतनी होती कि मेरा तो तख़य्युल से ही दिल टूट जाता। कमरे के दरवाज़े बंद कर के अंगीठियाँ सुलगतीं और चलता मालिश का दौर और उमूमन सिर्फ़ रब्बो ही रहती। बाक़ी की नौकरानियाँ बड़बड़ाती दरवाज़े पर से ही ज़रूरत की चीज़ें देती जातीं।

बात ये भी थी कि बेगम जान को खुजली का मर्ज़ था। बेचारी को ऐसी खुजली होती थी और हज़ारों तेल और उबटन मले जाते थे मगर खुजली थी कि क़ायम। डाक्टर हकीम कहते कुछ भी नहीं। जिस्म साफ़ चिट पड़ा है। हाँ कोई जिल्द अंदर बीमारी हो तो ख़ैर। नहीं भई ये डाक्टर तो मूए हैं पागल। कोई आप के दुश्मनों को मर्ज़ है। अल्लाह रक्खे ख़ून में गर्मी है। रब्बो मुस्कुरा कर कहती और महीन महीन नज़रों से बेगम जान को घूरती। ओह ये रब्बो जितनी ये बेगम जान गोरी, उतनी ही ये काली थी। जितनी ये बेगम जान सफ़ैद थीं, उतनी ही ये सुर्ख़। बस जैसे तपा हुआ लोहा। हल्के हल्के चेचक के दाग़। गट्ठा हुआ ठोस जिस्म। फुर्तीले छोटे छोटे हाथ, कसी हुई छोटी सी तोंद। बड़े बड़े फूले हुए होंट, जो हमेशा नमी में डूबे रहते और जिस्म में अजीब घबराने वाली बू के शरारे निकलते रहते थे और ये नथुने थे फूले हुए, हाथ किस क़दर फुर्तीले थे, अभी कमर पर, तो वो लीजिए फिसल कर गए कूल्हों पर, वहाँ रपटे रानों पर और फिर दौड़ टखनों की तरफ़। मैं तो जब भी बेगम जान के पास बैठती यही देखती कि अब उसके हाथ कहाँ हैं और क्या कर रहे हैं।

आज रब्बो अपने बेटे से मिलने गई हुई थी। वो बड़ा झगड़ालू था। बहुत कुछ बेगम जान ने किया। उसे दुकान कराई, गाँव में लगाया मगर वो किसी तरह मानता ही न था। नवाब साहब के यहाँ कुछ दिन रहा। ख़ूब जोड़े भागे भी बने। न जाने क्यूँ ऐसा भागा कि रब्बो से मिलने भी न आता था। लिहाज़ा रब्बो ही अपने किसी रिश्तेदार के यहाँ उस से मिलने गई थी। बेगम जान न जाने देती मगर रब्बो भी मजबूर हो गई। सारा दिन बेगम जान परेशान रहीं। उसका जोड़ जोड़ टूटता रहा। किसी का छूना भी उन्हें न भाता था। उन्होंने खाना भी न खाया और सारा दिन उदास पड़ी रहीं।

"मैं खुजा दूँ सच कहती हूँ।" मैंने बड़े शौक़ से ताश के पत्ते बांटते हुए कहा। बेगम जान मुझे ग़ौर से देखने लगीं।
मैं थोड़ी देर खुजाती रही और बेगम जान चिपकी लेटी रहीं। दूसरे दिन रब्बो को आना था मगर वो आज भी ग़ायब थी। बेगम जान का मिज़ाज चिड़चिड़ा होता गया। चाय पी पी कर उन्होंने सर में दर्द कर लिया।
मैं फिर खुजाने लगी, उनकी पीठ चिकनी मेज़ की तख़्ती जैसी पीठ। मैं हौले हौले खुजाती रही। उनका काम कर के कैसी ख़ुश होती थी।
"ज़रा ज़ोर से खुजाओ बंद खोल दो" बेगम जान बोलीं।
इधर ए है ज़रा शाने से। नीचे हाँ वहाँ भई वाह हा हा वह सुरूर में ठंडी ठंडी सांसें लेकर इत्मिनान का इज़हार करने लगीं।
"और इधर हालाँकि बेगम जान का हाथ ख़ूब जा सकता था मगर वो मुझ से ही खुजवा रही थीं और मुझे उल्टा फ़ख़्र हो रहा था" यहाँ ओई तुम तो गुदगुदी करती हो वाह" वो हंसीं। मैं बातें भी कर रही थी और खुजा भी रही थी।
तुम्हें कल बाज़ार भेजूँगी क्या लोगी वही सोती जागती गुड़िया।
नहीं बेगम जान मैं तो गुड़िया नहीं लेती क्या बच्चा हूँ अब मैं"
बच्चा नहीं तो क्या बूढ़ी हो गई वह हंसीं गुड़िया नहीं तो बबुवा लेना कपड़े पहनाना ख़ुद। मैं दूंगी तुम्हें बहुत से कपड़े सुना" उन्होंने करवट ली।
"अच्छा" मैंने जवाब दिया।
"इधर।" उन्होंने मेरा हाथ पकड़ कर जहाँ खुजली हो रही थी, रख दिया। जहाँ उन्हें खुजली मालूम होती वहाँ रख देती और मैं बे-ख़याली में बबुवे के ध्यान में डूबी मशीन की तरह खुजाती रही और वो मुतवातिर बातें करती रहीं।
"सुनो तो तुम्हारी फ़राकें कम हो गई हैं। कल दर्ज़ी को दे दूंगी कि नई सी लाए। तुम्हारी अम्माँ कपड़े दे गई हैं।"
"वो लाल कपड़े की नहीं बनवाऊंगी चमारों जैसी है।" मैं बकवास कर रही थी और मेरा हाथ न जाने कहाँ से कहाँ पहुंचा। बातों बातों में मुझे मालूम भी न हुआ। बेगम जान

तो चित्त लेटी थीं अरे मैं ने जल्दी से हाथ खींच लिया।

"ओई लड़की देख कर नहीं खुजाती मेरी पसलियाँ नोचे डालती है।" बेगम जान शरारत से मुस्कराईं और मैं झेंप गई।

इधर आ कर मेरे पास लेट जा" उन्होंने मुझे बाज़ू पर सर रख कर लेटा लिया।

ऐ है कितनी सूख रही है। पसलियाँ निकल रही हैं। उन्होंने पसलियाँ गणना शुरू कर दीं।

"ऊँ" मैं मिनमिनाई।

"ओई तो क्या मैं खा जाऊँगी कैसा तंग स्विटर बुना है!" गर्म बनियान भी नहीं पहना तुमने मैं कुलबुलाने लगी। "कितनी पसलियाँ होती हैं" उन्होंने बात बदली।

"एक तरफ़ नौ और एक तरफ़ दस" मैंने स्कूल में याद की हुई हाई जैन की मदद ली। वो भी ऊटपटाँग।

"हटा लो हाथ हाँ एक दो तीन"

मेरा दिल चाहा किस तरह भागूँ और उन्होंने ज़ोर से भींचा।

"ऊँ" मैं मचल गई बेगम जान ज़ोर ज़ोर से हँसने लगीं। अब भी जब कभी मैं उनका उस वक़्त का चेहरा याद करती हूँ तो दिल घबराने लगता है। उनकी आँखों के पपोटे और वज़नी हो गए। ऊपर के होंट पर सियाही घिरी हुई थी। बावजूद सर्दी के पसीने की नन्ही नन्ही बूंदें होंटों पर और नाक पर चमक रही थीं। उसके हाथ यख़ ठंडे थे। मगर नरम जैसे उन पर खाल उतर गई हो। उन्होंने शाल उतार दी और कारगे के महीन कुरते में इनका जिस्म आटे की लोनी की तरह चमक रहा था। भारी जड़ाऊ सोने के ग्रीन बटन गिरेबान की एक तरफ़ झूल रहे थे। शाम हो गई थी और कमरे में अंधेरा घट रहा था। मुझे एक न मालूम डर से वहशत सी होने लगी। बेगम जान की गहरी गहरी आँखें। मैं रोने लगी दिल में। वो मुझे एक मिट्टी के खिलौने की तरह भींच रही थीं। उनके गर्म गर्म जिस्म से मेरा दिल हो लाने लगा मगर उन पर तो जैसे भुतना सवार था और मेरे दिमाग़ का ये हाल कि न चीख़ा जाए और न रह सकूँ। थोड़ी देर के बाद वो पस्त हो कर निढाल लेट गईं। उनका चेहरा फीका और बद रौनक हो गया और

लंबी लंबी सांसें लेने लगीं। मैं समझी कि अब मरीं ये और वहाँ से उठ कर सरपट भागी बाहर।

शुक्र है कि रब्बो रात को आ गई और मैं डरी हुई जल्दी से लिहाफ़ ओढ़ कर सो गई मगर नींद कहाँ। चुप घंटों पड़ी रही।

अम्माँ किसी तरह आ ही नहीं चुकी थीं। बेगम जान से मुझे ऐसा डर लगता था कि मैं सारा दिन मामाओं के पास बैठी रही मगर उनके कमरे में क़दम रखते ही दम निकलता था और कहती किस से और कहती ही क्या कि बेगम जान से डर लगता है। बेगम जान जो मेरे ऊपर जान छिड़कती थीं।

आज रब्बो में और बेगम जान में फिर अन बन हो गई मेरी क़िस्मत की ख़राबी कहिए या कुछ और मुझे उन दोनों की अन बन से डर लगा। क्यूँकि रात ही बेगम जान को ख़याल आया कि मैं बाहर सर्दी में घूम रही हूँ और मरूंगी निमोनिए में।

"लड़की क्या मेरा सर मुंडवाएगी। जो कुछ हुआ हो गया, तो और आफ़त आएगी।" उन्होंने मुझे पास बिठा लिया। वो ख़ुद मुँह हाथ सिलफ़ची में धो रही थीं, चाय तिपाई पर रखी थी।

"चाय तो बनाओ एक प्याली मुझे भी देना वो तौलिए से मुँह ख़ुश्क कर के बोलीं ज़रा कपड़े बदल लूँ।"

वो कपड़े बदलती रहीं और मैं चाय पीती रही। बेगम जान नाईन से पीठ मलवाते वक़्त अगर मुझे किसी काम से बुलवातीं, तो मैं गर्दन मोड़े जाती और वापस भाग आती। अब जो उन्होंने कपड़े बदले, तो मेरा दिल उलटने लगा। मुँह मोड़े मैं चाय पीती रही।

"हाय अम्माँ मेरे दल ने बे-कसी से पुकारा आख़िर ऐसा भाइयों से किया लड़ती हूँ जो तुम मेरी मुसीबता माँ को हमेशा से मेरा लड़कों के साथ खेलना नापसंद है। कहो भला लड़के क्या शेर चीते हैं जो निगल जाएँगे उनकी लाडली को; और लड़के भी कौन? ख़ुद भाई और दो चार सड़े सड़ाए। उन ज़रा ज़रा से उनके दोस्त मगर नहीं, वो तो औरत ज़ात को सात सालों में रखने की क़ाएल और यहाँ बेगम जान की वो दहश्त कि दुनिया भर के गुंडों से नहीं। बस चलता, सो उस वक़्त सड़क पर भाग जाती, फिर वहाँ न

टिकती मगर लाचार थी। मजबूर कलेजा पर पत्थर रखे बैठी रही।"
कपड़े बदल कर सोला सिंघार हुए और गर्म गर्म ख़ुशबुओं के इतर ने और भी उन्हें अंगारा बना दिया और वो चलीं मुझ पर लाड उतारने।
"घर जाऊंगी" मैंने उनकी हर राय के जवाब में कहा और रोने लगी। "मेरे पास तो आओ मैं तुम्हें बाज़ार ले चलूँगी सुनो तो।"
मगर मैं कली की तरह फिसल गई। सारे खिलौने, मिठाइयाँ एक तरफ़ और घर जाने की रट एक तरफ़।
"वहाँ भया मारेंगे चुड़ैल" उन्होंने प्यार से मुझे थप्पड़ लगाया।
"पड़ीं मारें भय्या मैंने सोचा और रूठी अकड़ती रही। "कच्ची अमियाँ खट्टी होती हैं बेगम जान" जली कटी रब्बो ने राय दी और फिर उसके बाद बेगम जान को दौरा पड़ गया। सोने का हार जो वो थोड़ी देर पहले मुझे पहना रही थीं, टुकड़े टुकड़े हो गया। महीन जाली का दुपट्टा तार तार और वो मांग जो मैंने कभी बिगड़ी न देखी थी, झाड़ झनकाड़ हो गई।
"ओह ओह ओह ओह" वो झटकी ले लेकर चिल्लाने लगीं। मैं रपटी बाहर।बड़े जतनों से बेगम जान को होश आया। जब मैं सोने के लिए कमरे में दबे पैर जा कर झांकी, तो रब्बो उनकी कमर से लगी जिस्म दबा रही थी।
"जूती उतार दो उसने उसकी पसलियाँ खुजाते हुए कहा और मैं चुहिया की तरह लिहाफ़ में दुबक गई।"
सर सर फट कज बेगम जान का लिहाफ़ अंधेरे में फिर हाथी की तरह झूम रहा था।
"अल्लाह आँ" मैंने मरी हुई आवाज़ निकाली। लिहाफ़ में हाथी छलका और बैठ गया। मैं भी चुप हो गई। हाथी ने फिर लूट मचाई। मेरा रोवाँ रोवाँ काँपा। आज मैंने दिल में ठान लिया कि ज़रूर हिम्मत कर के सिरहाने लगा हुआ बल्ब जला दूँ। हाथ फड़फड़ा रहा था और जैसे उकड़ूं बैठने की कोशिश कर रहा था। चपड़ चपड़ कुछ खाने की आवाज़ आ रही थीं। जैसे कोई मज़ेदार चटनी चख रहा हो। अब मैं समझी! ये बेगम जान ने आज कुछ नहीं खाया और रब्बो मर्दी तो है सदा की चट्टो। ज़रूर ये तिरमाल

उड़ा रही है। मैंने नथुने फुला कर सूँ सूँ हवा को सूंघा। सिवाए इतर संदल और हिना की गर्म गर्म ख़ुशबू के और कुछ महसूस न हुआ।
लिहाफ़ फिर उमढ़ना शुरू हुआ। मैंने बहुतेरा चाहा कि चुपकी पड़ी रहूँ। मगर उस लिहाफ़ ने तो ऐसी अजीब अजीब शक्लें बनानी शुरू कीं कि मैं डर गई। मालूम होता था गूँ गूँ कर के कोई बड़ा सा मेंढ़क फूल रहा है और अब उछल कर मेरे ऊपर आया। आना माँ मैं हिम्मत कर के गुनगुनाई। मगर वहाँ कुछ शुनवाई न हुई और लिहाफ़ मेरे दिमाग़ में घुस कर फूलना शुरू हुआ मैंने डरते डरते पलंग के दूसरी तरफ़ पैर उतारे और टटोल टटोल कर बिजली का बटन दबाया। हाथी ने लिहाफ़ के नीचे एक क़लाबाज़ी लगाई और पिचक गया। क़लाबाज़ी लगाने में लिहाफ़ का कोना फ़ुट भर उठा।
अल्लाह! मैं ग़ड़ाप से अपने बिछौने में।